भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-5, अंक-1	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-25.00
सोमवार, 26 जन' 81	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 2.25

बड़ी वफा से.....

निभाई तुमने....हमारी थोड़ी सी-नहीं, ज्यादातर बेवफाई

'आम का पेड़ आम का ही पेड़ है और नीम का पेड़ नीम का ही पेड़ है'—ठीक इस निश्चय की तरह हमें भगवत्स्वरूप की दृढ़ रूप से अपरोक्ष अनुभूति हो कि—

वह ही शाश्वत आनन्द है,

वह ही शाश्वत आनन्द है,

वह ही अमृत है और

वह ही मुझे इस भगवत्स्वरूप विभूति द्वारा प्राप्त हुआ है—ऐसी परिपक्व निष्ठा होने के बाद ही ब्रह्मपरब्रह्म के—अक्षरपुरुषोत्तम के ज्ञान का प्रारंभ होता है।

जगत् के जीवों को इस अमृत का पान कराने के लिए ब्रह्मस्वरूप गुरुहरि योगीजी महाराज ने 3 फरवरी 1952 का महामंगलकारी पवित्र दिन चुना और प. पू. काकाजी को महाप्रभु स्वामिनारायण भगवान के स्वरूप की अपरोक्षनुभूति करवा कर अक्षरधाम का—प्रभु के धाम का द्वार खोल दिया। उस पल से प. पू. काकाजी गुरुहरि योगीजी महाराज का दिव्य पात्र—लाड़ले वारिसदार बने ! सदा दिव्य साकार पिता के है वह दिव्य मानसपुत्र बने ! गुरुहरि योगीजी महाराज की एक चिरंजीव अमानत बन गये ! और....स्वरूप का अनुभूतिज्ञान होते ही चैतन्य का प्रकाश फैल गया !!

आज वह पर्व का दिन आ रहा है.....इस शुभ अवसर हम सबके प्राणेश उस दिव्य विभूति को सहस्त्रशत वंदना हो।

साक्षात्कार अनेक प्रकार के हो सकते हैं। ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज ने लींबड़ी नगर में संतों और मुक्तों के समक्ष स्पष्टता करने हेतु पूछा था कि—'ज्योति देखना, प्रकाश देखना, सिद्धता पाना—इन सबको सही साक्षात्कार कहते हो क्या?' फिर इस प्रश्न का प्रत्युत्तर स्वयं ही देते हुए उन्होंने कहा था कि—'जो अक्षरधाम में बिराजमान है'—ऐसा अपरोक्ष ज्ञान हमारे अंतरतम में दृढ़ हो जाय और—

सारा सत्संग दिव्य माना जाये,

किसी भी प्रकार के भेद की भावना न रहे.....

संक्षेप में, अविरोध वृत्ति हो और अभेद दृष्टि हो.....

फलस्वरूप अल्प संबंध वाले को ब्रह्म की मूर्ति रूप में देख सके–वही है सही साक्षात्कार !

धाम की इस रीति, नीति, स्थिति और निश्चयात्मक मांगल्यमयी अवस्था की यूं स्पष्टता 3 फरवरी के दिन गुरुहरि योगीजी महाराज ने प. पू. काकाजी को करवाई और सर्व श्रेयार्थियों के लिए निर्दोषबुद्धि का स्वरूप के सम्यक् ज्ञान का या ज्ञानसमाधि का राजमार्ग खोल दिया !

इस स्वरूपानूभूति के पश्चात् पू. काकाजी ने–

प्रत्यक्ष स्वरूप के परिचय का स्पष्ट और सत्य उद्घोष प्रारंभ किया,

सत्संग समाज में सुहृद्भाव प्रवाहित किया,

आत्मबुद्धि और प्रीति के सच्चे सत्संग का स्वयं प्रारंभ करके इसे व्यापक बनाया,

तितिक्षा को–सहन करने की शक्ति को प्रोत्साहित किया, और

अखंड अक्षरधाम में रहने की दिव्य दृष्टि प्रदान की।

भगवद् दर्शन होने के पश्चात् सेवक को हर व्यक्ति में, पदार्थ में, प्रसंग में या प्रतिभा में 'तू ही-तू ही' सहज सिद्ध होता है। तब न रहता है अभाव, न रहता है किसी के अवगुण देखने की वृत्ति, नहीं कभी भावना में परिवर्तन होता है। पू. काकाजी के रोम-रोम में 'योगी' और 'योगी परिवार का माहात्म्य नित्य निरंतर वर्तमान है। केवल प्रत्यक्ष स्वरूप ही कर्ता हर्ता है ऐसी दृढ़ता करके-करवा के अक्षरधाम के एक दिव्य समाज के आज वे प्राण पुरुष बन चुके हैं। केवल योगीजी महाराज का ही ध्यान और उनके संबंध के माहात्म्य में रह कर इस परम भागवत् पुरुष ने समग्र गुणातीतबाग में करुणा का सिंचन हृदय दे कर किया है। यह है उनकी स्वरूपलक्षी विरल सरलता ! और यह ही है लक्षण प्रभु के स्वरूप का !

हम–

इनको याद करें या न करें,

इनका सत्कार करें या इनकी उपेक्षा कर,

दो शब्द उनको कह भी दें

किन्तु, पू. काकाजी के हृदय से मातृत्व की धारा ही बहती है।....निष्कारण कल्याण करने की ही उनकी प्रवृत्ति है। परन्तु, हम पामर जीव है, अतः कभी-कभी

भेददृष्टि आ जाती है,

हमारे सुहृद् भाव में परिवर्तन आ जाता है,

निष्ठा में कमी आती है,

संकुचितता आती है,

तारतम्यता-उच्चावचता भी नापने लग जाते हैं,

अभाव-अवगुन देखने लग जाते हैं,

चित्तवृत्ति विक्षिप्त हो जाती है

अपना परायापन महसूस करने लगते हैं।

किन्तु, पू. काकाजी हमारी इन सब चीजों को देखते ही नहीं है। हम गुरुहरि योगीजी महाराज के है, गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज के है–इतना ही वे देखते है और वही उनके लिये काफी है। उनकी अपरिमित करुणा में कभी ज्वार-भाटे नहीं आये, वह तो गंगा के अस्खलित प्रवाह के सम हमारे प्रति बढ़ता ही रहा है। एक ओर योगीजी महाराज का यह अति निर्दोष और परमपवित्र उत्तराधिकारी है और दूसरी ओर क्षूद्र वृत्तियों में मग्न हम पुराने योगियाँ ! हम इनके बेवफा और....वे हैं गुरुहरि योगीजी महाराज के वफादार सेवक....!! उक्ति सार्थक है–

''बड़ी वफा से.....

निभाई तुमने....हमारी थोड़ी सी-नहीं ज्यादातर बेवफाई !''

और...इनके संपर्क में आने वाले नूतन समाज को प्रतीति होती ही रहती है–

''प.पू. काकाजी अर्थात् प्रेमभाव का चिदाकाश और मधुरभाव का अस्खलित प्रवाह।''

सर्वदेशीयता में पू. काकाजी गुरुहरि योगाजी महाराज के पूर्ण अनुयायी का कार्य कर रहे हैं। किसी का खंडन नहीं, किसी का मंडन नहीं....। पू. काकाजी गणपति उत्सव में ओतप्रोत होते हैं, हनुमानजी की मूर्तिप्रतिष्ठा में भी वह प्रधान है, स्वामी रामतीर्थ-शताब्दी में इनका सक्रिय योगदान है, लक्ष्मीनारायण देव का यज्ञ हो रहा है तो पू. काकाजी वहाँ हैं ही! सब देव, सब सन्त उनके है और वह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान स्वामिनारायण के हैं। यह विरासत उनको योगीजी महाराज से प्राप्त हुई है। योगीजी के समान उनका उद्देश्य केवल एक ही है कि गुणातीतपुरुष सर्व को हृदयस्पर्शी हो। अतः एव इनकी प्रवृत्ति है। प्रत्येक डग, प्रत्येक श्वास इसके लिये ही है।

किन्तु पू. काकाजी के जीवन में सर्वोच्च रस तो है भजन करने का। इस बात में तो वह योगी जी महाराज के चुस्त अनुयायी है। थोड़ा एकान्त मिला–योगीजी महाराज भजन ही करते थे। बारिश नहीं है–तो, योगीजी महाराज भजन करते-करवाते थे। किसी हरिभक्त को देशकाल अत्यंत पीड़ित करते थे तब योगीजी महाराज धून भजन करते थे और करवाते थे। धून-भजन बिना कार्यक्रम नहीं, धून-भजन बिना कार्य आरम्भ ही नहीं हो–यह थी प.पू. योगी बापा की प्रणाली ! पू. काकाजी की भी यही प्रणाली है !! यदि योगीजी महाराज को हम परमोच्च भजनिक कहेंगे तो काकाजी परमोच्च भजनिक है। इस भजन का धून का जपयज्ञ का महिमा भारत में सुप्रसिद्ध है। गीताजी में इसका माहात्म्य 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि' द्वारा प्रदर्शित है।

पू. काकाजी का जपयज्ञ सामान्य नहीं है। उनके नामस्मरण में एक पुकार है, एक भावना है, एक अभीप्सा है, एक रस है, एक लय अवस्था है, एक स्मृति है, एक अखंड संबंध है। परिणाम रूप उनकी प्रार्थना से, धून से, जप से, नामस्मरण से सहृदयी को संबल मिलता है, समझ मिलती है, उसका संबंध दृढ़ होता है। भक्तों के श्रेय के लिये ही यह साठ से अधिक आयु की व्यक्ति घंटों तक जप करती रहती है–यह है उनकी असली प्रीति-असली आत्मीयता !

गुरुहरि योगीजी महाराज की एक और विरासत भी इन्होंने न केवल अपनी कर ली है किन्तु हम सब को इसमें भागीदार बनाने के लिये निरंतर उद्युक्त है। वे कभी अपने आपको भगवान नहीं कहते है, न कहलवाते हैं। वे तो अपने आपको भगवान का बालक कहते है।

'बालक बनिये और सारी उपाधि भगवान को समर्पित कर के निश्चित बन जाईएं'–यह है परमादेश उन्हीं का हमारे लिये, जो इन्होंने अपने आचरण के माध्यम से दिया है।

यदि हम इस परम मंगलकारी परमादेश को अपने में जीयेंगे तो हम सर्वदा, सर्वथा सुखी सुखी हो जायेंगे। चलो 3 फरवरी 1981 के दिन हम यही प्रार्थना करें....हम बालक बनें, अपनी रागद्वेष युक्त दृष्टि का–सीमित बुद्धि का सहारा छोड़कर इन्हीं के होकर भगवान का सहारा लें....।

* The sweetest music in the world to another person is the sound of his own name.
* The deepest urge in human nature is the desire to be important.

-Dale Carnegle

3rd. February.....

The third day of February 1952 was a momentous day in my life. in total obedience with full trust; love and sincerity to the master; leaving my huge and profitable business, the selfless service rendered totally in the intrest of Shri Nandak selection campagin for a period of two months brought His spiecal blessings and grace.

Accordingly on the ist February, He initiated me by giving special prasad in the form of almonds which were offered to Harikarishna Maharaj in Mahapooja. Three days celibacy was to be observed and with single pointed devotion it was to chant continuously lord Swaminarayan is name remembering H.D. Shastrjee Maharaj's life incidents His teachings and blessings. This was the begining of the purification of my intrnal instrument and the "Nyas Vidhai" was completed on the 2nd day with total silence, intropection, Puja and Pradakshina at Gondal Akshar Deri. The procedure was chalked out for the whole day. Five injuctions given by Him were to be carried out thrice during the day. Prayers were to be offered for an hour with the awakening and illumination of inner self. A number of other suggestions were carried out in a contemplative mood. The last day was the day of fast, after which the new enlightenment sprang in me at 7 o' clock in the morning. This occured in a natural manner before theimage of Ghanashyam Maharaj. In the morning Gurudev had asked me to complete the "Mansi Pooja". 200 Parikramas and the mahapooja before 5 o' clock. As this was being done by me, fully aware of the Shaktipat which wa just happening in the presence of H.D. Yogiji Maharaj. at 5.30 A.M. actually after prostrating before the lotus feet of Gurudev and His embrace with overflowing love and grace an instantaneous illumination and enlightenment from the heart centre resulted. I felt a high rise in blood pressure and a terrific heaviness in the brain. Chitta consciousness was fully awakened and at 7 o' clock Gurudev uttered placing his hands on my head, as if requesting Maharaj to have that sort of Nirvikalpa Samadhi or the graceful ultimate experience of the divine nature of Gurudev Shastriji Maharj and Transcendental Highest Supreme Being Sahjanand Swami withi His Eternal Abode Mulakshar Brahman. Immernse flow of rays, as if coming from innumerable suns engulfing me suddenly lifted my spirit separating it from my physical body which was put under trance. It lifted me higher and higher, so high and with such speed beyond all mathematical figures. My sense and perception in that atmosphere was entirely of the light waves. Before my spirit was lifted, a huge pranic roar and Nada was observed. My first experience was of separation of my physical and mental coverings. My pure self could see, instantaneously, but without any congnisance and feeling except that of the images of my Gurudev Yogiji Maharaj and Shastriji Maharaj. I was aware of a number of thought waves like clouds passing. Observers told me later that I was crying loudly with the raring sound of a lion, which remained for there minutes. Then the whole thing became quiet. First feeling of separateness from my body was felt and experienced at every moment. Any idea or thought or conceptiom or desire used to be instantaneously fulfilled and there was a vision of universe and of all the objects and subtle elements-within and without; and the congnisance of this phenomenon or illumination was felt but could not be explained. The only language was the language of lightening. The only images perceivable were Gurudev Shastriji Maharaj and Shriji Maharaj as divine entities in their Divya-vigrah-Swaroops. The first day was passed in trance and Samadhi, fully awakened and illuminated in a new sphere. There were

numerous other planes and categories of evolutionary stages which were also shown by my Gurudev. There was a second experience of my spirit transcending from the bondage of Mahasunya. It is described in Bhagwat also that illuminated souls or Jiwan-muktas after separating from physical body, cosmic body travel by this lighted path through this complete darkness or Mahasunya covering all universes from all the sides. It is said in scriptures that a divine entity or Avatar who has fully conqurered passions and purified the inner self and has equivalence with Eternal Brahman or Saksatkar alone, can pass through this Mahasunya. This is the phenomenon or the completely dark etherial world which is above the celestial planes. This can only be transcended by the pure grace of divine master, who must have trodden the paith into the ever lustrous and illuminated Eternal Abode Akshardham. The highest emancipated Jivan muktas reside in this Eternal abode. On my entry into this atmosphere which was beyond all etherial and Mahasunya planes, a new Brahminised form was assumed by my spirit. There was some sort of divine consciousness which was only experienced. This was so enjoyable, so delightful, so peaceful-far more than the mystical experience and difficult to be communicated in this language. This third step was in realisation of eternal bliss and the all pervading presence of the divine Master. Maharaj was seen in Him and Shastriji Maharaj was also seen in Him all were seen in Yogiji Maharaj! Perhaps it may have been due to my previous imagination and conviction about these divine personalities. A light wave like a lightening flash satisfied my need, in natural manner as if it may have been planned for my rest All the lights became sky blue. There was such an ennobling tranquility radiating from the light of innumerable moons. There was a different time period in an entirely different sort of eternal law and order by which all things were automatically happening. After some time there was all golden light and the forms of all Jiwanmuktas were of similar type as experienced before by Saint Tulsi Maharaj and also by His Divinity Bhagatji Maharaj which were also known and proved to be absolutely correct. These divine bodies of similar type have no Yonis or genetive organs but were illuminated souls. The movements were all based so speedily much more forceful than microwaves. This golden light was so satisfying and blissful that everone would freely stay there permanently. All sorts of description given in scriptures, though may differ in their narrations, but are as realistic as. You can see the Sun. This is the "Tattwa Darshan" and can be written down in a big volume. The different levels of consciousness and planes with their presiding deities and Ishtadevta in Swarglok, Bhuvarlok, Mahalok, Golok, Vaikuntha, Siddha Shila, Badrikashram-the names given esoterically as different names of divine tattvas were observed, felt and experienced by Gurudev's grace. We need not go into exact details now, but note the actual change which came into my life as a result of spiritual experience and ultimate realisation.

I always used to feel, after this period of 72 hours of Samadhi, i.e. attributeless consciousness, as if I am Brahmaroop and totally different and separate from psychophysical aspects, yet living life in this world. The distinguishing quality which became so natural was spiritual equality in good and bad, right and wrong, love and hatred just as "bramabhuta Prasannatma".

All thoughts all actions and all movements now originate from Him and can enjoy bliss, power and Suhridbhav with eternal calm. Whatever Gurudev prompts me is being done for the spiritual development of the fellow beings. Supernatural powers always remain in our service but they can be used according to God's will for creating confidence and faith in the truth seekers for trust and astikbhav in the existance of the Supreme

Power, concealed in this life and in this world. Original creative principle and will of God and the final evolution and spiritual status of soul was completed here. This was not Nirvana or Moksha or liberation only but it was now the beginning of Jnan-Samadhi, with the imbibing of divine qualities which were worked out within me by Eternal Adyashakti-Brahaman in toto, with whom I had spiritual relationship as oneness in a childlike manner. It is a real "Akshardham" as mentioned in holy books or scriptures.

This ultimate experience bore a permanent feature and divine nature as explained by Maharaj in Vach Gadh M. 66 with the qualities described in Vach. Gadh. F. 27. All my internal instruments were spiritualised. Though working in an ordinary manner, yet I could always remain in prmanent communion with the Master, the Divine Supreme Being. Through the divine nature He does everything at every moment! His presence is always felt inwardly and also outwardly as human beings with whom I am sharing their joys and sorrows with love and friendliness without any sort of expectations. My humanly desires, egoistic tendencies, all sort of ambitions and expectations have completely disappeared. Male and female sense dropped out. All forms looked alike, as if functioning on pranic force (Mahaprana). My entire vision is changed into divine vision. i.e., I could see Maharaj in my heart, in this life and in this world. The objects, forms and all were also seen as Brahamswaroop. Unity in diversity and diversity in unity was felt and experienced and still Gurudev Maharaj were transeending into infiniteness beyond and beyond in unfathomable vastness.

Those other qualities and ingredients like fear, sex, security, greatness, prestige, power have no value right from 1952 till now. However, under the law of nature, one has to live as an ordinary human being. Even Avatars when they assume human form share joys and sorrows of human beings, yet remaining in transcendental consciousness. This is the ultimate goal and experience as a whole. These are no doubt bold statements but with all gratitude and compliments they are related to my Gurudev Shastriji Maharaj and Yogiji Maharaj. With this certainty and positiveness in an authentic manner, I humbly present the validity, genuiness and effectiveness of Boons and Blessings given by Lord Swaminarayana for enjoying enteral bliss in this life for freedom and liberation in Brahmic consciousness.

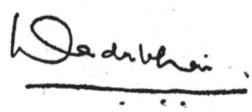

व्रतोत्सवसूची

1. दि.	31.1.81	शनिवार	ब्र.स्व. स्वामिश्री योगीजी महाराज स्वधामगमन, एकादशी
2. दि.	3.2.81	मंगलवार	प.पू. काकाजी का स्वरूपानुभूति दिन
3. दि.	9.2.81	सोमवार	बसंतपंचमी, श्री शिक्षापत्री जयंती, ब्र. स्व. स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज का प्राकट्यदिन
4. दि.	13.2.81	शुक्रवार	नवमी, श्री हरि जयंती
5. दि.	15.2.81	रविवार	एकादशी, व्रत

Published by Sadhu Mukundjivandas for Yogi Divine Society,
A 108, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. India, Tel. 718838
Printed at Mayur Press Delhi-33